REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 8 | MAY - 2026

हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना का अध्ययन

मधु सिंह
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. रमेश सिंह वाट
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
शासकीय महाविद्यालय, जैतहरी, जिला अनूपपुर (म.प्र.)

सारांश –

समकालीन हिन्दी कथा–साहित्य में एस. आर. हरनोट का विशेष महत्व है। उन्होंने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से समाज के उपेक्षित, शोषित तथा वंचित वर्गों के जीवन–संघर्ष को अत्यंत मार्मिकता और संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया है। विशेषतः उनकी कहानियों में दलित जीवन की पीड़ा, सामाजिक अपमान, आर्थिक शोषण तथा मानवीय अस्मिता के प्रश्न अत्यंत प्रभावशाली रूप में सामने आते हैं। हरनोट की कहानियाँ केवल सामाजिक यथार्थ का चित्रण नहीं करतीं, बल्कि वे दलित वर्ग के प्रति गहरी मानवीय संवेदना और सामाजिक चेतना को भी अभिव्यक्त करती हैं। भारतीय समाज में जाति–व्यवस्था ने सदियों से सामाजिक असमानता को जन्म दिया है। दलित वर्ग को सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक स्तर पर निरंतर उपेक्षा और शोषण का सामना करना पड़ा है। आधुनिक युग में शिक्षा, लोकतंत्र और सामाजिक आंदोलनों के प्रभाव से दलित चेतना का विकास अवश्य हुआ है, किन्तु समाज में जातिगत भेदभाव और मानसिकता आज भी अनेक रूपों में विद्यमान है। हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श इसी सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति है, जिसमें दलित जीवन की वेदना, संघर्ष और आत्मसम्मान की चेतना को प्रमुखता दी गई है।

मुख्य शब्द – हिन्दी कथा–साहित्य, एस. आर. हरनोट, समाज, उपेक्षित, शोषित, जीवन–संघर्ष, आर्थिक शोषण एवं मानवीय अस्मिता।

प्रस्तावना –

भारतीय एस. आर. हरनोट ने अपनी कहानियों में विशेषतः हिमाचली समाज की पृष्ठभूमि में दलित जीवन के विविध पक्षों को अत्यंत यथार्थपरक ढंग से चित्रित किया है। उनकी कहानियों में दलित पात्र केवल करुणा के पात्र नहीं हैं, बल्कि वे अपने अस्तित्व और सम्मान के लिए संघर्षरत मनुष्य के रूप में दिखाई देते हैं। एस. आर. हरनोट की संवेदना मानवीय मूल्यों पर आधारित है, जिसके कारण वे दलित वर्ग के जीवन की पीड़ा को भीतर तक अनुभव करते हैं और उसे अत्यंत प्रभावशाली कलात्मकता के साथ अभिव्यक्त करते हैं।[1]

हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना सामाजिक यथार्थ के साथ–साथ मानवीय संबंधों की जटिलता को भी उद्घाटित करती है। उन्होंने यह दिखाया है कि जातिगत भेदभाव केवल सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा नहीं है, बल्कि वह मनुष्य की मानसिकता और व्यवहार में भी गहराई से समाया हुआ है। उनकी कहानियों में

दलित पात्रों की पीड़ा, अपमान, संघर्ष तथा प्रतिरोध के माध्यम से समाज की अमानवीय संरचना का यथार्थ चित्र उभरकर सामने आता है।[2]

हरनोट का कथा–साहित्य दलित संवेदना को केवल सहानुभूति तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे सामाजिक परिवर्तन की चेतना से भी जोड़ता है। उनकी कहानियाँ पाठकों को सामाजिक असमानता और अन्याय के प्रति संवेदनशील बनाती हैं तथा मानवीय समानता और न्याय की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं। इस दृष्टि से उनका साहित्य समकालीन हिन्दी कथा–साहित्य में दलित विमर्श को नई संवेदनात्मक गहराई प्रदान करता है।[3]

समकालीन हिन्दी कहानी के परिदृश्य में एस. आर. हरनोट का रचनात्मक अवदान अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। नई सदी के प्रारम्भ से हिन्दी कहानी ने कथ्य, शिल्प और भाषा के स्तर पर पुनः अपनी केंद्रीय उपस्थिति दर्ज की है। इस पुनर्स्थापन में उन कथाकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है जिन्होंने कहानी को उसके मूल कथात्मक स्वरूप, सामाजिक सरोकार और जनजीवन की संवेदनाओं से जोड़े रखा। हरनोट ऐसे ही कथाकार हैं, जिनकी कहानियाँ लोकजीवन, श्रमशील वर्ग, दलित चेतना, विस्थापन और पर्यावरणीय संकट जैसे प्रश्नों को केंद्र में रखती हैं। उनकी रचनाओं में कहानी केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ का दस्तावेज बनकर उपस्थित होती है।[4]

हरनोट की कथा–दृष्टि किसी एक साहित्यिक आंदोलन या वैचारिक खांचे तक सीमित नहीं है। वे न तो उत्तर–आधुनिक चमत्कारप्रियता के लेखक हैं और न ही केवल वैचारिक घोषणाओं तक सीमित कथाकार। उनकी कहानियों में जीवन का वास्तविक संघर्ष, वर्गीय अंतर्विरोध और मनुष्य की अस्मिता के प्रश्न अत्यंत स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त होते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियों में दलितों, मजदूरों, किसानों और हाशिए पर पड़े समुदायों की पीड़ा केवल सहानुभूति का विषय नहीं बनती, बल्कि प्रतिरोध की चेतना में रूपांतरित हो जाती है।[5]

हरनोट की रचनाओं का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे दलित जीवन को बाहरी दृष्टि से नहीं देखते, बल्कि उसके सामाजिक–सांस्कृतिक यथार्थ के भीतर प्रवेश करते हैं। उनकी कहानियों में दलित पात्र करुणा के निष्क्रिय पात्र नहीं, बल्कि संघर्षशील और आत्मसम्मानी मनुष्य के रूप में उपस्थित होते हैं। जीन काठी कहानी इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें पुरातन सामाजिक रूढ़ियों और जातिगत शोषण के विरुद्ध दलित अस्मिता का स्वर उभरता है। हरनोट यहाँ दलित जीवन की विडंबनाओं को केवल चित्रित नहीं करते, बल्कि उस व्यवस्था की आलोचना भी करते हैं, जिसने सदियों से मनुष्य को जाति के आधार पर विभाजित किया है।[6]

उनकी कहानियों में विकास और आधुनिकता के नाम पर होने वाले विस्थापन का प्रश्न भी दलित चेतना से जुड़कर सामने आता है। नदी गायब है कहानी में लेखक ने दिखाया है कि किस प्रकार बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ और सत्ता–समर्थित विकास योजनाएँ ग्रामीणों की जमीन, जल और जीवन को निगल रही हैं। गाँव के लोग जब अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करते हैं, तब राज्यसत्ता पुलिस और प्रशासन के माध्यम से उनके विरोध को कुचलने का प्रयास करती है। इस कहानी में दलित और आदिवासी समुदायों का संघर्ष केवल आर्थिक प्रश्न नहीं रह जाता, बल्कि सांस्कृतिक अस्तित्व और मानवीय गरिमा की लड़ाई बन जाता है।[7]

हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना का संबंध केवल जातिगत उत्पीड़न तक सीमित नहीं है। उसमें पर्यावरण, विस्थापन, श्रम और सांस्कृतिक अस्मिता जैसे अनेक प्रश्न समाहित हैं। मिट्टी के लोग कहानी में गाँव का दलित परिवार चौधरी हरिसिंह जैसे सामंती शक्तियों से संघर्ष करता दिखाई देता है। यहाँ बालदू जैसा पात्र अन्याय के सामने झुकता नहीं, बल्कि अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए निरंतर प्रतिरोध करता है।[8] यह प्रतिरोध हरनोट की जनवादी चेतना का मूल स्वर है। वे यह स्थापित करते हैं कि दलित जीवन केवल पीड़ा का पर्याय नहीं, बल्कि संघर्ष और स्वाभिमान की भी पहचान है।

विश्लेषण –

हरनोट के कथा–साहित्य में प्रकृति और दलित चेतना का गहरा संबंध दिखाई देता है। पहाड़, नदी, जंगल और मिट्टी उनके यहाँ केवल प्राकृतिक तत्व नहीं, बल्कि लोकजीवन और श्रमशील वर्ग की जीवन–रेखा हैं। जब विकास योजनाओं के नाम पर नदियाँ रोकी जाती हैं, जंगल काटे जाते हैं और गाँव उजाड़े जाते हैं, तब सबसे अधिक प्रभावित वही समुदाय होते हैं जो पहले से सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित हैं। इस प्रकार पर्यावरण विनाश भी हरनोट के यहाँ सामाजिक अन्याय का ही रूप बन जाता है।

प्रेमचंद की जनवादी परंपरा का विस्तार हरनोट की कहानियों में स्पष्ट दिखाई देता है। जैसे प्रेमचंद ने किसान और दलित जीवन को हिन्दी कथा–साहित्य के केंद्र में स्थापित किया था, उसी प्रकार हरनोट समकालीन समाज के वंचित वर्गों की आवाज बनकर सामने आते हैं। उनकी कहानियों में संवेदना और प्रतिरोध का संतुलन है। वे केवल शोषण का वर्णन नहीं करते, बल्कि परिवर्तन की संभावनाओं को भी रेखांकित करते हैं।

हरनोट स्वयं भी इस प्रश्न को गंभीरता से उठाते हैं कि दलित साहित्य केवल दलित लेखक ही लिख सकता है या नहीं। इस संदर्भ में वे स्वीकार करते हैं कि दलित समुदाय की पीड़ा को सबसे प्रामाणिक ढंग से वही लेखक व्यक्त कर सकता है जिसने उसे स्वयं भोगा हो। इसी कारण वे ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा जूठन, शरणकुमार लिंबाले की अक्करमाशी तथा तुलसीराम की मुर्दहिया जैसी कृतियों का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि जातिगत अपमान और पीड़ा का वास्तविक अनुभव वही जान सकता है जिसने उसे जिया हो। तथापि वे यह भी स्वीकार करते हैं कि अनेक गैर–दलित लेखकों ने भी दलित प्रश्नों को गंभीरता से उठाकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है।

हरनोट की कहानियों की एक बड़ी विशेषता उनकी लोकधर्मी भाषा और पहाड़ी जीवन से गहरा जुड़ाव है। उनकी रचनाओं में हिमाचल का लोकजीवन, प्राकृतिक सौंदर्य और वहाँ के सर्वहारा वर्ग का संघर्ष एक साथ उपस्थित होता है। यही कारण है कि उनका कथा–साहित्य क्षेत्रीय होते हुए भी व्यापक भारतीय यथार्थ का प्रतिनिधित्व करता है। 'हिडिम्ब' और 'नदी रंग जैसी लड़की' जैसे उपन्यास पर्यावरण, मनुष्यता और सामाजिक असमानता के प्रश्नों को अत्यंत संवेदनात्मक ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

एस. आर. हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना बहुआयामी रूप में अभिव्यक्त हुई है। उनकी रचनाएँ दलित जीवन की करुणा, संघर्ष, विस्थापन, श्रम और अस्मिता के प्रश्नों को गहरी मानवीय संवेदना के साथ प्रस्तुत करती हैं। वे जनवादी परंपरा के ऐसे कथाकार हैं, जिन्होंने साहित्य को समाज के वंचित वर्गों की आवाज बनाया। उनकी कहानियाँ यह विश्वास उत्पन्न करती हैं कि अन्याय और शोषण के विरुद्ध प्रतिरोध ही मनुष्य की असली पहचान है। इसी कारण हरनोट का कथा–साहित्य समकालीन हिन्दी कहानी में दलित चेतना और जनपक्षधरता का सशक्त दस्तावेज माना जाता है।

हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना केवल सामाजिक करुणा का भाव नहीं है, बल्कि वह शोषण, विस्थापन, वर्गीय असमानता और मानवीय अपमान के विरुद्ध एक सक्रिय वैचारिक प्रतिरोध के रूप में अभिव्यक्त होती है। उनके कथा–साहित्य में दलित जीवन की पीड़ा को किसी सहानुभूतिपरक दृष्टि से नहीं, बल्कि यथार्थ की गहरी सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संरचनाओं के भीतर रखकर देखा गया है। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ दलित चेतना को व्यापक जनवादी चेतना से जोड़ती हैं। हरनोट के यहाँ दलित केवल जाति–विशेष का प्रतिनिधि नहीं, बल्कि वह समूचा मेहनतकश और हाशिए पर स्थित मनुष्य है, जो सत्ता, पूँजी, धर्म और व्यवस्था के बहुस्तरीय शोषण का शिकार है।

हरनोट की कथा–दृष्टि लोकजनवादी वैचारिकी से निर्मित होती है। वे जीवन की सतही घटनाओं के बजाय उसकी तहों में जाकर उस वास्तविकता को उद्घाटित करते हैं, जिसे सत्ता और प्रभुत्वशाली वर्ग प्रायः छिपा देना चाहता है। इसी संदर्भ में वे यह स्थापित करते हैं कि "कोई भी युग, कोई भी समय, कोई भी मौसम बिना मेहनतकशों और किसानों के जिन्दा नहीं रह सकता।" यह कथन हरनोट की जनपक्षधर दृष्टि का आधार है, जहाँ श्रम और श्रमिक की गरिमा को समाज की वास्तविक शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। उनकी कहानियों में किसान, मजदूर, मोची, दलित स्त्री, विस्थापित परिवार और उपेक्षित वृद्ध पात्र केवल करुणा उत्पन्न करने के लिए उपस्थित नहीं होते, बल्कि वे उस सामाजिक संरचना के विरुद्ध प्रश्न खड़े करते हैं, जो उन्हें लगातार हाशिए पर धकेलती रही है।

'सड़ान' कहानी में संत भगवानदास का चरित्र इसी शोषणकारी सत्ता–संरचना का प्रतीक है। वह एक भ्रष्ट अधिकारी से कथित संत में रूपांतरित होकर धर्म और आस्था को शोषण का माध्यम बना देता है। समाज का अधिकांश हिस्सा उसके पाखंड के सामने नतमस्तक दिखाई देता है, किंतु नीरम अकेला होकर भी उसका विरोध करता है। नीरम का यह प्रतिरोध आरंभ में व्यक्तिगत प्रतीत होता है, क्योंकि संत के निर्माण कार्य से उसके घर को खतरा है, परन्तु धीरे–धीरे यही व्यक्तिगत संघर्ष सामूहिक सामाजिक प्रतिरोध का रूप ग्रहण कर लेता है। हरनोट यहाँ यह संकेत करते हैं कि सामाजिक चेतना का उद्भव प्रायः व्यक्ति के निजी अनुभवों से ही होता है। नीरम का अकेलापन वास्तव में उस सजग मनुष्य का प्रतीक है, जो भीड़ के सम्मोहन से बाहर निकलकर सत्य को पहचानने का साहस रखता है।

हरनोट की कहानियों में पर्यावरणीय संकट और दलित संवेदना एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। 'आभी' कहानी इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। आभी नामक चिड़िया झील को प्रदूषण से बचाने के लिए निरंतर तिनके बीनती रहती है। यह कथा केवल पर्यावरण–संरक्षण की नहीं, बल्कि उस मानवीय संवेदना की कथा है, जो प्रकृति और जीवन के संतुलन को बचाए रखने के लिए संघर्षरत है। कहानी में जंगल माफिया, भ्रष्ट प्रशासन और राजनीतिक तंत्र मिलकर प्रकृति का विनाश करते हैं, जबकि एक छोटी–सी चिड़िया प्रतिरोध का प्रतीक बन जाती है। यहाँ हरनोट यह स्थापित करते हैं कि प्रकृति का विनाश अंततः मनुष्य की संवेदना और अस्तित्व का विनाश है। इस प्रकार पर्यावरणीय प्रश्न उनके यहाँ सामाजिक न्याय के प्रश्न से जुड़ जाता है।

'हक्वाई' कहानी में मोची भागीराम का संघर्ष दलित श्रम की अवमानना और व्यवस्था की अमानवीयता को उजागर करता है। भागीराम केवल अपनी दुकान बचाने के लिए संघर्ष नहीं कर रहा, बल्कि वह उस श्रम–संस्कृति की रक्षा कर रहा है, जिसे विकास और पूँजीवादी व्यवस्था ने अप्रासंगिक बना दिया है। उसकी उम्र "तीन कम सत्तर" बताकर लेखक स्वतंत्रता के बाद के भारत की विडंबना को सामने लाते हैं कि आजादी के इतने वर्षों बाद भी श्रमिक और दलित वर्ग सम्मानजनक जीवन से वंचित है। विकास के नाम पर छोटे कुटीर उद्योग नष्ट हो रहे हैं, जंगल कट रहे हैं और आम आदमी अपनी जमीन तथा श्रम दोनों से बेदखल किया जा रहा है। फिर भी भागीराम का संघर्ष यह संकेत देता है कि मनुष्य की जिजीविषा अब भी समाप्त नहीं हुई है।

'शहर में रतीराम' कहानी आधुनिक शहरी जीवन की संवेदनहीनता का मार्मिक आख्यान है। रतीराम अपने ही घर और शहर में पराया हो गया है। उसके माध्यम से हरनोट उस सामाजिक विघटन को चित्रित करते हैं, जहाँ बुजुर्ग, श्रमिक और गरीब व्यक्ति धीरे–धीरे अनुपयोगी घोषित कर दिए जाते हैं। कहानी में व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य उपस्थित है, किंतु उसके भीतर मानवीय संबंधों के विघटन की गहरी पीड़ा भी निहित है। इसी प्रकार 'माएँ' कहानी में मातृत्व, गरीबी, मीडिया और सामाजिक उपेक्षा के अनेक स्तर एक साथ उद्घाटित होते हैं। बंदरिया का अपने मृत बच्चे को सीने से लगाए घूमना केवल पशु–करुणा का दृश्य नहीं, बल्कि मनुष्य की मृतप्राय संवेदनाओं का प्रतीक बन जाता है।

'गाली' कहानी हरनोट की प्रतिरोधधर्मी चेतना का सशक्त उदाहरण है। मुश्कीराम का संघर्ष केवल व्यक्तिगत अपमान का प्रतिकार नहीं, बल्कि उस सामाजिक संरचना के विरुद्ध विद्रोह है, जिसने सार्वजनिक संसाधनों और श्रम की गरिमा पर कब्जा कर लिया है। प्रधान द्वारा दी गई "गाली" यहाँ सम्पूर्ण व्यवस्था की दमनकारी मानसिकता का प्रतीक बन जाती है। कहानी यह स्पष्ट करती है कि जब मनुष्य के आत्मसम्मान पर निरंतर आघात होता है, तब प्रतिरोध अनिवार्य हो जाता है। हरनोट इस प्रतिरोध को किसी वैचारिक नारेबाजी में नहीं बदलते, बल्कि उसे जीवन की स्वाभाविक प्रतिक्रिया के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

'भागादेवी का चायघर' कहानी में दलित स्त्री की त्रासदी और बाजारवादी व्यवस्था का गठजोड़ अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित हुआ है। भागादेवी का शरीर और उसका श्रम दोनों कॉर्पोरेट कंपनियों के लिए 'लोकेशन' और 'प्रोडक्ट' बन जाते हैं। यह स्थिति आधुनिक उपभोक्तावादी समाज की उस क्रूर मानसिकता को उजागर करती है, जहाँ गरीब और दलित स्त्री की अस्मिता तक बाजार के हाथों गिरवी रख दी जाती है। हरनोट यहाँ स्त्री–विमर्श, दलित–विमर्श और पूँजीवादी शोषण को एक साथ जोड़ते हैं। भागा का संघर्ष केवल आर्थिक नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा की रक्षा का संघर्ष भी है।

'नदी गायब है' कहानी में विकास और विस्थापन की त्रासदी अपने चरम रूप में दिखाई देती है। गाँव के लोग अपनी जमीन, जल और अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करते हैं, किंतु सत्ता और प्रशासन बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं। जब लोकतांत्रिक प्रतिरोध विफल हो जाता है, तब लोग गुरिल्ला संघर्ष का रास्ता अपनाते हैं। हरनोट यहाँ यह स्पष्ट करते हैं कि हिंसा और प्रतिरोध किसी समुदाय की मूल प्रवृत्ति नहीं होते, बल्कि अन्यायपूर्ण व्यवस्था उन्हें उस दिशा में धकेलती है। यह कहानी समकालीन भारत में आदिवासी और ग्रामीण संघर्षों की सामाजिक पृष्ठभूमि को समझने का महत्वपूर्ण दस्तावेज बन जाती है।

एस. आर. हरनोट की कहानियाँ दलित संवेदना को व्यापक मानवीय और जनवादी संदर्भों में स्थापित करती हैं। उनके कथा–साहित्य में दलित, किसान, मजदूर, स्त्री और विस्थापित मनुष्य की पीड़ा केवल करुणा उत्पन्न करने के लिए नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की चेतना जगाने के लिए प्रस्तुत की गई है। हरनोट प्रेमचंदीय जनवादी परंपरा को समकालीन संदर्भों में आगे बढ़ाते हैं और यह सिद्ध करते हैं कि साहित्य केवल यथार्थ का प्रतिबिंब नहीं, बल्कि उसके भीतर परिवर्तन की संभावनाओं का भी वाहक होता है। यही कारण

है कि उनका कथा–साहित्य समकालीन हिन्दी कहानी में दलित चेतना और जनपक्षधरता का एक सशक्त हस्ताक्षर बनकर उभरता है।

हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना का स्वर केवल जातिगत उत्पीड़न तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था, बाजारवाद, विस्थापन, पारिवारिक विघटन और मानवीय मूल्यों के क्षरण के विरुद्ध व्यापक मानवीय प्रतिरोध के रूप में उपस्थित होता है। उनके कथा–साहित्य में दलित जीवन का यथार्थ किसी एक वर्ग की पीड़ा नहीं, बल्कि उस समूची व्यवस्था का उद्घाटन है, जिसमें गरीब, श्रमिक, किसान, स्त्री, वृद्ध और प्रकृति सभी शोषण का शिकार हैं। हरनोट की विशेषता यह है कि वे अपने पात्रों को केवल दया के पात्र के रूप में प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि उनके भीतर संघर्ष, असहमति और आत्मसम्मान की चेतना को भी स्थापित करते हैं।

'भागादेवी का चायघर' कहानी में दलित स्त्री की अस्मिता पर बाजारवादी संस्कृति के हमले को अत्यंत मार्मिक ढंग से चित्रित किया गया है। मल्टीनेशनल कंपनियाँ भागा के शरीर को विज्ञापन के माध्यम के रूप में इस्तेमाल करना चाहती हैं और उसका पति बालेराम आर्थिक अभाव के कारण इस सौदे को स्वीकार करने को तैयार हो जाता है। यहाँ स्त्री केवल व्यक्ति नहीं रह जाती, बल्कि बाजार की वस्तु में परिवर्तित कर दी जाती है। कंपनियाँ उसके शरीर के विभिन्न अंगों को 'प्राइम लोकेशन' मानकर खरीदना चाहती हैं। यह प्रसंग आधुनिक उपभोक्तावादी मानसिकता की अमानवीयता को उजागर करता है, जहाँ मनुष्य की गरिमा और संवेदना का मूल्य धन से आँका जाने लगता है। भागा का आक्रोश इस व्यवस्था के विरुद्ध दलित स्त्री चेतना का सशक्त प्रतिरोध बनकर उभरता है। वह अपने पति की आँखों में बाजारवादी लालच का विकृत चेहरा देखती है और समझ जाती है कि उसका शरीर अब प्रेम या आत्मीयता का नहीं, बल्कि सौदेबाजी का माध्यम बना दिया गया है।

हरनोट यहाँ यह स्पष्ट करते हैं कि भूमंडलीकरण और बाजारवाद ने दलित और गरीब वर्ग को सबसे अधिक प्रभावित किया है। आर्थिक अभाव मनुष्य को ऐसी विवशताओं तक पहुँचा देता है, जहाँ वह अपने संबंधों और नैतिकताओं तक का सौदा करने को बाध्य हो जाता है। भागा का चरित्र इस शोषण के विरुद्ध मानवीय अस्मिता का प्रतीक है। उसके भीतर उठता विद्रोह यह सिद्ध करता है कि दलित संवेदना केवल करुणा नहीं, बल्कि आत्मसम्मान की चेतना भी है।

'बिल्लियाँ बतियाती हैं' कहानी में हरनोट ने वृद्धावस्था, अकेलेपन और पारिवारिक विघटन की त्रासदी को अत्यंत संवेदनात्मक ढंग से चित्रित किया है। अम्मा का जीवन पशु–पक्षियों, बिल्लियों और चिड़ियों के बीच बीतता है, क्योंकि मनुष्य उससे दूर हो चुका है। बेटा और बहू शहर की आधुनिक जीवनशैली में इतने व्यस्त हैं कि माँ की भावनाओं और अकेलेपन को समझ नहीं पाते। अम्मा का चिड़ियों को पुकारना दरअसल उसके भीतर के रिक्त संसार की अभिव्यक्ति है। वह बिल्लियों और पक्षियों में वही आत्मीयता खोजती है, जो उसे अपने परिवार से नहीं मिल पाती। यहाँ हरनोट यह संकेत करते हैं कि आधुनिकता ने मनुष्य को संवेदनहीन बना दिया है, जबकि पशु–पक्षी अब भी संबंधों की गरमाहट को बचाए हुए हैं।

कहानी में अम्मा का अपने बेटे के लिए पैसे बचाकर रखना अत्यंत मार्मिक प्रसंग है। बेटा पैसे लेने आता है, किंतु अम्मा उसकी मनःस्थिति को बिना कहे समझ जाती है। यह प्रसंग माँ की निस्वार्थ संवेदना और पुत्र की आत्मग्लानि दोनों को एक साथ उद्घाटित करता है। हरनोट यहाँ पारिवारिक संबंधों के विघटन को केवल सामाजिक परिवर्तन के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय मूल्यों के पतन के रूप में प्रस्तुत करते हैं। अम्मा की करुणा दलित संवेदना का विस्तार है, जिसमें प्रेम, त्याग और सहनशीलता की गहरी मानवीय चेतना निहित है।

'एक नदी तड़पती है' कहानी में विस्थापन और पर्यावरण विनाश की पीड़ा को दलित और श्रमजीवी जीवन के संदर्भ में चित्रित किया गया है। दादी सुनमा अपने गाँव, नदी और मिट्टी से गहरे भावनात्मक संबंध रखती है। बाँध निर्माण के कारण जब नदी का अस्तित्व समाप्त होने लगता है, तब सुनमा का जीवन भी मानो अर्थहीन हो जाता है। नदी का मरना यहाँ केवल प्राकृतिक विनाश नहीं, बल्कि लोकसंस्कृति, स्मृतियों और जीवन–मूल्यों के समाप्त होने का प्रतीक है। हरनोट इस कहानी में विकास के उस मॉडल की आलोचना करते हैं, जो गाँवों, किसानों और आदिवासियों को उजाड़कर पूँजीवादी हितों की रक्षा करता है।

दादी सुनमा का संघर्ष यह सिद्ध करता है कि प्रकृति और मनुष्य का संबंध केवल उपयोगिता का नहीं, बल्कि अस्तित्व और संवेदना का संबंध है। नदी के प्रति उसका लगाव उस लोकजीवन का प्रतीक है, जो प्रकृति के साथ सहअस्तित्व में विश्वास करता है। विस्थापन की यह पीड़ा दलित संवेदना का व्यापक मानवीय रूप

ग्रहण कर लेती है, क्योंकि इससे सबसे अधिक प्रभावित वही वर्ग होता है, जो पहले से ही सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर है।

'दारोश तथा अन्य कहानियाँ' में संकलित कथाएँ शोषित और हाशिए पर स्थित समाज की संघर्षशील चेतना को अभिव्यक्त करती हैं। हरनोट यह दिखाते हैं कि वर्तमान समय में शोषण के तरीके बदल गए हैं। पहले जो दमन प्रत्यक्ष था, वह अब विकास, बाजार और आधुनिकता के नाम पर किया जा रहा है। सर्वहारा वर्ग लगातार अपने अधिकारों और अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा है, किंतु मध्यवर्ग बाजारवादी संस्कृति के प्रभाव में अपनी जड़ों और परंपराओं से कटता जा रहा है। हरनोट इस मानसिकता को 'हिडिम्बीय आसुरी सोच' कहते हैं, जिसने मनुष्य को प्रकृति और समाज दोनों से दूर कर दिया है।

उनकी कहानियों में मजदूर, किसान, दलित और वनवासी केवल पीड़ित पात्र नहीं हैं, बल्कि वे संघर्ष और प्रतिरोध की चेतना से सम्पन्न हैं। हरनोट का कथा–साहित्य यह स्पष्ट करता है कि वास्तविक भारत अब भी गाँवों, खेतों, जंगलों और श्रमिक जीवन में बसता है। यही कारण है कि उनकी कहानियों में संवेदनशीलता, यथार्थ और प्रतिरोध का स्वर अत्यंत प्रामाणिक रूप में उभरता है।

एस. आर. हरनोट की कहानियाँ दलित संवेदना को व्यापक सामाजिक और मानवीय संदर्भों में स्थापित करती हैं। उनके यहाँ दलित विमर्श केवल जाति तक सीमित नहीं, बल्कि वह समूची शोषणकारी व्यवस्था के विरुद्ध मनुष्य की अस्मिता और संवेदना की लड़ाई बन जाता है। हरनोट की कथा–दृष्टि जनवादी चेतना से संपन्न है, जिसमें प्रकृति, श्रम, लोकजीवन और मनुष्यता के पक्ष में गहरा विश्वास दिखाई देता है। यही कारण है कि उनका कथा–साहित्य समकालीन हिन्दी कहानी में जनपक्षधरता और दलित चेतना का सशक्त दस्तावेज माना जाता है।

निष्कर्ष:

निष्कर्षतः एस. आर. हरनोट ने अपनी कहानियों में दलित जीवन की पीड़ा, संघर्ष, सामाजिक उपेक्षा तथा मानवीय अस्मिता के प्रश्नों को अत्यंत मार्मिकता और संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियाँ केवल सामाजिक यथार्थ का चित्रण नहीं करतीं, बल्कि वे समाज में व्याप्त जातिगत विषमता और अमानवीयता के विरुद्ध एक सशक्त मानवीय हस्तक्षेप के रूप में सामने आती हैं। हरनोट की कहानियों में दलित संवेदना बहुआयामी रूप में अभिव्यक्त होती है। उन्होंने दलित वर्ग के सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक शोषण, जातिगत अपमान तथा धार्मिक पाखंड को अत्यंत यथार्थपरक ढंग से चित्रित किया है। उनकी कहानियाँ यह संकेत करती हैं कि आधुनिक समाज में शिक्षा और विकास के बावजूद जातिवादी मानसिकता आज भी सामाजिक संरचना में गहराई से विद्यमान है। विशेषतः ग्रामीण और पर्वतीय समाज में दलित वर्ग अनेक प्रकार की सामाजिक विषमताओं और अन्यायपूर्ण परिस्थितियों से जूझता हुआ दिखाई देता है। हरनोट की रचनात्मक विशेषता यह है कि वे दलित पात्रों को केवल करुणा के पात्र के रूप में प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि उन्हें आत्मसम्मान और संघर्षशील चेतना से युक्त मनुष्य के रूप में चित्रित करते हैं। उनकी कहानियों में दलित पात्र अपने अधिकारों और अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करते दिखाई देते हैं। इस प्रकार हरनोट की दलित संवेदना निष्क्रिय सहानुभूति न होकर सक्रिय सामाजिक चेतना और प्रतिरोध की भावना से जुड़ी हुई है। हरनोट ने दलित संवेदना को मानवीय संवेदना के व्यापक संदर्भ में देखा है। उनकी कहानियों में जातिगत शोषण केवल सामाजिक समस्या नहीं है, बल्कि वह मानवीय मूल्यों के संकट का भी प्रतीक है। उन्होंने यह दिखाया है कि जब तक समाज में समानता, न्याय और मानवीय गरिमा की स्थापना नहीं होगी, तब तक वास्तविक सामाजिक विकास संभव नहीं है। हरनोट की कहानियों में लोकजीवन, लोकसंस्कृति और पर्वतीय परिवेश के माध्यम से दलित जीवन की समस्याओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। उनकी भाषा, शैली और कथानक सामाजिक यथार्थ को सहजता और प्रामाणिकता प्रदान करते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ पाठकों को केवल भावनात्मक स्तर पर प्रभावित नहीं करतीं, बल्कि उन्हें सामाजिक विषमताओं के प्रति गंभीर रूप से सोचने के लिए भी प्रेरित करती हैं। समकालीन हिन्दी कथा–साहित्य में दलित विमर्श सामाजिक न्याय और मानवीय समानता की स्थापना का महत्वपूर्ण माध्यम है। एस. आर. हरनोट की कहानियाँ इस विमर्श को संवेदनात्मक गहराई, सामाजिक यथार्थ और मानवीय दृष्टि प्रदान करती हैं। उन्होंने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से दलित वर्ग के जीवन–संघर्ष और आत्मसम्मान को साहित्यिक अभिव्यक्ति देकर हिन्दी कथा–साहित्य को समृद्ध किया है। इस प्रकार हरनोट की कहानियों में अभिव्यक्त दलित संवेदना सामाजिक यथार्थ,

मानवीय करुणा तथा प्रतिरोध चेतना का सशक्त स्वर है। उनकी कहानियाँ समाज में व्याप्त जातिगत विषमता और अन्याय के विरुद्ध मानवीय समानता, सामाजिक न्याय तथा दलित अस्मिता की स्थापना की दिशा में महत्वपूर्ण साहित्यिक योगदान प्रस्तुत करती हैं।

संदर्भ –

[1] हरनोट, एस. आर. हिडिम्ब. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2004.
[2] वाल्मीकि, ओमप्रकाश. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. नई दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, 2001.
[3] लिंबाले, शरणकुमार. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2005.
[4] सिंह, नामवर. कहानी : नई कहानी. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, 2006.
[5] पाण्डेय, मैनेजर. साहित्य और समाजशास्त्रीय दृष्टि. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2008.
[6] हरनोट, एस. आर. जीन काठी तथा अन्य कहानियाँ. शिमलाः लोकभारती प्रकाशन, 2010.
[7] हरनोट, एस. आर. नदी गायब है. नई दिल्लीः आधार प्रकाशन, 2012.
[8] हरनोट, एस. आर. मिट्टी के लोग. शिमलाः हिमाचल पुस्तक भंडार, 2015.